# जैन पुराणों में वर्णित प्राचीन भारतीय आभूषण

डॉ. देवीप्रसाद मिश्र

पुराण भारतीय सांस्कृतिक इतिहास के अजस्र स्रोत हैं। वस्तुतः पुराणों को "भारतीय संस्कृति के विश्वकोश" की संज्ञा दी जा सकती है। पुराण साहित्य भारतीय संस्कृति की वैदिक और जैन धाराओं में समान रूप से उपलब्ध होता है। "इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपबृह्येत्" की प्रेरणा से जहाँ वैदिक परम्पराओं में अष्टादश तथा अनेक उपपुराणों की रचना हुई, वहीं जैन परम्परा में तिरसठ शलाका महापुरुषों के जीवन चरित को आधार बनाकर अनेक पुराण लिखे गये।

जैन पुराणों की रचना प्राकृत, अपभ्रंश, संस्कृत तथा विभिन्न प्रादेशिक भाषाओं में हुई है। अष्टादश पुराणों की तरह यहाँ पुराणों की संख्या सीमित नहीं की गई है। इस कारण शताधिक संख्या में जैन पुराण लिखे गये।

जैन पुराणकारों ने प्रायः किसी एक या अधिक शलाका-पुरुषों के चरित्र को आधार बनाकर अपने ग्रन्थ की रचना की, साथ ही उन्होंने पारम्परिक पुराणों की तरह भारत के सांस्कृतिक इतिहास की बहुमूल्य सामग्री को अपने ग्रन्थों में निबद्ध किया है। इस दृष्टि से जैन पुराण भारतीय संस्कृति की अमूल्य निधि हैं।

जैनपुराणों के उद्भव एवं विकास में तत्कालीन राजनैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं धार्मिक परिस्थितियाँ क्रियाशील थीं। पारम्परिक पुराणों के आधार पर जैनियों ने रामायण, महाभारत के पात्रों एवं कथाओं से अपने पुराणों की रचना की और उसमें जैन सिद्धान्तों, धार्मिक एवं दार्शनिक तत्त्वों तथा विधियों का समावेश किया है।

जैनपुराणों का रचनाकाल ज्ञात है। ये ग्रन्थ छठी शती ई. से अट्ठारहवीं शती ई. तक विभिन्न भाषाओं में लिखे गये। प्रारम्भिक एवं आधारभूत जैनपुराणों का समय सातवीं शती ई. से दशवीं शती ई. के मध्य है। संस्कृत में विरचित जैनपुराणों में अधोलिखित आभूषणों के बारे में साक्ष्य मिलते हैं।

आभूषण धारण करना भी वस्त्र के समान समृद्धि एवं सुखी जीवन का परिचायक है। इसके अतिरिक्त वस्त्राभूषण से संस्कृति भी प्रभावित होती है। सिकंदार



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के अनुसार वस्त्र निर्माण कला के आविष्कार के साथ-साथ आभूषण का भी प्रयोग भारतीय सभ्यता के विकास के साथ प्रारम्भ हुआ।[1] जैनपुराणों में शारीरिक सौन्दर्य की अभिवृद्धि के लिए आभूषण की उपादेयता प्रतिपादित की गई है। महापुराण में उल्लिखित है कि कुलवती नारियाँ अलंकार धारण करती थी[2], किन्तु विधवा स्त्रियाँ आभूषणों का परित्याग कर देती थीं।[3] इसी ग्रन्थ में आभूषण से अलंकृत होने के लिए अलंकार-गृह[4] और श्रीगृह[5] का वर्णन है। महापुराण में ही वर्णित है कि नूपुर, बाजूबन्द, रुचिक, अंगद (अनन्त), करधनी, हार एवं मुकुटादि आभूषण भूषणाङ्ग नाम के कल्पवृक्ष द्वारा उपलब्ध होते थे।[6] प्राचीनकाल में आभूषण एवं प्रसाधन-सामग्री वृक्षों से प्राप्त होने के उल्लेख मिलते हैं। शकुन्तला की विदाई के शुभावसर पर वृक्षों ने उसके लिए वस्त्र, आभूषण एवं प्रसाधन सामग्री प्रदान की थी।[7]

### आभूषण बनाने के उपादान

जैनपुराणों में आपाद-मस्तक आभूषणों के उल्लेख एवं विवरण प्राप्त होते हैं। यह विवरण पारम्परिक वर्णक, समसामयिक तथा काल्पनिक तीनों प्रकार का है। जैन पुराणों में वर्णित है कि आभूषण का निर्माण मणियों, स्वर्ण, रजत आदि से होता था। महापुराण में उल्लिखित है कि अग्नि में स्वर्ण को तपाकर शुद्ध किया जाता था और इससे आभूषण को बनाते थे।[8] रत्नजटित स्वर्णाभूषण को रत्नाभूषण कहते हैं। समुद्र में महामणि के बढ़ने का भी उल्लेख मिलता है।[9] जैनपुराणों में विभिन्न प्रकार की मणियों का वर्णन है जो निम्नलिखित हैं—चन्द्रकान्तमणि[10], सूर्यकान्तमणि,[11] हीरा[12], वैदूर्यमणि[13], कौस्तुभमणि[14], मोती[15], वज्र (हीरा)[16], इन्द्रमणि[17], (इन्द्रनील मणि) इसके दो भेद होते हैं—महाइन्द्रमणि (हल्के गहरे नीले रंग की तथा इन्द्रनीलमणि[18] (हल्के नीले रंग की); प्रवाल[19], गोमुख मणि[20], मुक्ता[21], स्फटिक

१. जे. सी. सिकदार—स्टडीज इन द भगवती-सूत्र, मुजफ्फरपुर १९६४, पृ. २४१।
२. महा, ६२।२९। ३. वही, ६८।२२५। ४. वही, ६३।४६१।
५. वही, ६३।४५८। ६. महा, ९।४१। ७. अभिज्ञानशाकुन्तल, ४।५।
८. महा, ६१।१२४। ९. वही, ६३।४१५। १०. हरिवंश, २।७।
११. वही, २।८। १२. वही, २।१०। १३. वही, २।१०।
१४. वही, ६२।५४। १५. वही, २।१०, महा ६८।६७६।
१६. पद्म, ८०।७५, महा ३५।४२। १७. महा, ५८।८६, पद्म, ८०।७५, हरिवंश, ७।७२।
१८. हरिवंश, २।५४। १९. महा, १२।४४, ३५।२३४। २०. वही, १४।१४।
२१. वही, ७।२३१, १५।८१; हरिवंश, ७।७३।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मणि[२२], मरकत मणि[२३], पद्मरागमणि[२४], जातञ्जन[२५](कृष्णमणि), पद्मराग[६] (कालमणि), हैम[२७](पीतमणि) आदि आभूषण बनाने के लिए उक्त मणियों का प्रयोग करते थे।

## आभूषणों के प्रकार एवं स्वरूप

नर-नारी दोनों ही आभूषण-प्रेमी होते थे। इनके आभूषणों में प्रायः साम्यता है। कुण्डल, हार, अंगद, वलय, मुद्रिकादि आभूषण स्त्री-पुरुष दोनों ही धारण करते थे। शिखामणि, किरीट एवं मुकुट पुरुषों के प्रमुख आभूषण थे। शरीर के अंगानुसार पृथक्-पृथक् आभूषण धारण किया करते थे। इनका विस्तृत विवरण निम्न प्रकार है—

**(अ) शिरोभूषण**—सिर को विभूषित करने वाले आभरणों में प्रमुख मुकुट, किरीट, सीमन्तकमणि, छत्र, शेखर, चूणामणि, पट्ट आदि हैं। महापुराण के अनुसार सिन्दूर से तिलक भी लगाते थे।[२८]

**१. किरीट**—[२९]चक्रवर्ती एवं बड़े सम्राट् ही इसको धारण करते थे। इसका निर्माण स्वर्ण से होता था। यह प्रभावशाली सम्राटों की महत्ता का सूचक था।

**२. किरीटी**[३०]—महापुराण में इसका वर्णन है। स्वर्ण और मणियों द्वारा किरीटी निर्मित होती थी। किरीट से यह छोटा होता था। स्त्री-पुरुष दोनों ही इसको धारण करते थे।

**३. चूड़ामणि**[३१]—पद्मपुराण में चूड़ामणि के लिए मूर्धिनरत्न का प्रयोग मिलता है[३२]। राजाओं एवं सामन्तों द्वारा इसका प्रयोग किया जाता था। चूड़ामणि के मध्य में मणि का होना अनिवार्य था। महापुराण में चूड़ामणि के साथ चूड़ारत्न भी व्यवहृत हुआ है।[३३] इन दोनों में अलंकरण की दृष्टि से साम्यता थी किन्तु भेद मात्र

---

२२. वही, १३।१५४, पद्म, ८०।७५।　　२३. वही, १३।१३८; हरिवंश, २।१०।
२४. वही, १३।१३६, वही २।९।　　२५. हरिवंश, ७।७।
२६. हरिवंश, ७।७२।　　२७. वही, ७।७२।　　२८. महा, ६८।२०५।
२९. वही, ६८।६५०; ११।१३३; पद्म, ११८।४७; तुलनीय—रघुवंश, १०।७५।
३०. वही, ३।७८।　　३१. पद्म, ३६।७; महा, १।४४, ४।९४, १४।८, हरिवंश, ११।१३।
३२. वही, ७१।६५।
३३. महा, २९।१६७; तुलनीय कुमारसम्भव, ६।८१; रघुवंश, १७।२८।



Jain Education International　　For Private & Personal Use Only　　www.jainelibrary.org

नाम का है। साधारणतया दोनों शब्द पर्यायवाची हैं। यह सिर में पहनने का गहना था।

**४. मुकुट**[३४]—राजा और सामन्त दोनों के ही सिर का आभूषण था। किरीट की अपेक्षा इसका मूल्य कम होता था। तीर्थंकरों के मुकुट धारण करने का उल्लेख जैनग्रन्थों में मिलता है। राजाओं के पंच चिह्नों में से यह भी था। निःसंदेह ही मुकुट का प्राचीनकाल में महत्त्व अत्यधिक था। विशेषतः इसका प्रचलन राजपरिवारों में था।

**५. मौलि**[३५]—डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल के अनुसार केशों के ऊपर के गोल स्वर्णपट्ट को मौलि कहते हैं।[३६] रत्न-किरणों से जगमगाने वाले, स्वर्णसूत्र में परिवेष्टित एवं मालाओं से युक्त मौलि का उल्लेख पद्मपुराण में उपलब्ध है। किरीट से इसका स्थान नीचा प्रतीत होता है, किन्तु सिर के अलंकारों में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान था।

**६. सीमान्तक मणि**[३७]—स्त्रियाँ अपनी माँग में इसको धारण करती थीं। आज भी इसका प्रचलन माँग-टीका के नाम से है।

**७. उत्तंस**[३८]—किरीट एवं मुकुट से भी यह उत्तम कोटि का होता था। तीर्थंकर इसको धारण किया करते थे। सभी प्रकार के मुकुटों से इसमें सुन्दरता अधिक होती थी। इसका प्रयोग विशेषतः धार्मिक नेता ही करते थे। इसका आकार किरीट एवं मुकुट से लघु होता था, परन्तु मूल्य इनसे अधिक होता था।

**८. कुन्तली**[३९]—किरीट के साथ ही इसका उल्लेख मिलता है। इससे ज्ञात होता है कि कुन्तली आकार में किरीट से बड़ी होती थी। कलगी के रूप में इसको केश में लगाते थे। किरीट के साथ ही इसको भी धारण किया जाता था। इसका प्रयोग स्त्री-पुरुष दोनों ही किया करते थे। जनसाधारण में इसका प्रचलन नहीं था। इसके धारण करने वालों के व्यक्तित्व में कई गुनी वृद्धि हो जाती थी। अपनी समृद्धि एवं प्रभुता के प्रदर्शनार्थ स्त्रियाँ इसको धारण करती थीं।

---

३४. वही, ३।९१, ३।१३०, ५।४; ९।४१, १०।१२६; पद्म, ८५।१०७, हरिवंश, ४१।३६ तुलनीय—रघुवंश, ९।१३।

३५. पद्म, ७१।७, ११।३२७; महा, ९।१८९; तुलनीय—रघुवंश, १३।५९।

३६. वासुदेवशरण अग्रवाल—हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ. २१९।

३७. पद्म, ८।७०। ३८. महा, १४।७। ३९. वही, ३।७८।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

९. **पट्ट**[४०]—बृहत्संहिता[४१] में बराहमिहिर ने पट्ट का स्वर्ण-निर्मित होना उल्लेख किया है। इसी स्थल पर इसके निम्नलिखित पाँच प्रकारों का भी वर्णन है—१. राजपट्ट (तीन शिखाएँ), २. महिषीपट्ट (तीन शिखाएँ), ३. युवराजपट्ट (तीन शिखाएँ), ४. सेनापतिपट्ट (एक शिखा), ५. प्रसादपट्ट (शिखा विहीन)। शिखा से तात्पर्य कलगी से है। इस प्रकार स्पष्ट होता है कि यह स्वर्ण का ही होता था और पगड़ी के ऊपर इसको बाँधा जाता था[४२]। आजकल भी विवाह के शुभावसरों पर पगड़ी के ऊपर पट्ट (कलगी) बाँधते हैं।

**(ब) कर्णाभूषण**—कानों में आभूषण धारण करने का प्रचलन प्राचीनकाल से चला आ रहा है। स्त्री-पुरुष दोनों के ही कानों में छिद्र होते थे और इसको दोनों धारण करते थे। कुण्डल, अवतंस, तालपत्रिका, बालियाँ आदि कर्णाभूषण में परिगणित होते हैं। इसके लिए कर्णाभूषण[४३] एवं कर्णाभरण[४४] शब्द प्रयुक्त हैं।

१. **कुण्डल**[४५]—यह कानों में धारण किया जाने वाला सामान्य आभूषण था। अमरकोश के अनुसार कानों को लपेटकर इसको धारण करते थे[४६]। महापुराण में वर्णित है कि कुण्डल कपोल तक लटकते थे[४७]। पद्मपुराण में उल्लिखित है कि शरीर के मात्र हिलने से कुण्डल भी हिलने लगता था[४८]। रत्न या मणि जटित होने के कारण कुण्डल के अनेक नाम भेद जैन पुराणों में मिलते हैं—मणिकुण्डल, रत्नकुण्डल, मकराकृतकुण्डल, कुण्डली, मकरांकित कुण्डल[४९]। इसका उल्लेख समराइच्चकहा[५०], यशस्तिलक[५१], अजन्ता की चित्र-कला[५२] तथा हम्मीर महाकाव्य[५३] में भी उपलब्ध है।

---

४०. महा, १६।२३३; ४१. बृहत्संहिता, ४८।२४।

४२. नेमिचन्द्र शास्त्री—आदिपुराण में प्रतिपादित भारत, पृ० २१०।

४३. पद्म, ३।१०२; ४४. वही, १०३।९४।

४५. पद्म, ११८।४७; महा, ३।७८, १५।१८९, १६।३३; ३३।१२४; ७२।१०७, हरिवंश, ७।८९। ४६. कुण्डलम् कर्णवेष्टनम्।—अमरकोष, २.६.१०३।

४७. रत्नकुण्डलयुग्मेन गण्डपर्यन्तचुम्बिना।—महा, १५।१८९।

४८. चंचलो मणिकुण्डलः।—पद्म, ७१।१३।

४९. महा, ३।७८, ३।१०२, ४।१७७, १६।१३३, ९।१९०; ३३।१२४।

५०. समराइच्चकहा, २, पृ० १००; ५१. यशस्तिलक, पृ० ३६७।

५२. वासुदेवशरण अग्रवाल—हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, फलक २०, चित्र ७८।

५३. दशरथ शर्मा—अर्ली चौहान डाइनेस्टीज, पृ० २६३।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. **अवतंस**[५४]—पद्मपुराण में इसे चंचल (चंचलावतंसक) वर्णित किया गया है। अधिकांशतः यह पुष्प एवं कोमल पत्तों से निर्मित किया जाता था। बाण भट्ट ने हर्ष-चरित में कान के दो अलंकार अवतंस (जो प्रायः पुष्पों से निर्मित किया जाता था) एवं कुण्डल का उल्लेख किया है[५५]।

३. **तालपत्रिका**[५६]—कान में धारण करने का आभूषण होता था। इसे पुरुष अपने एक कान में धारण करते थे। इसको महाकान्ति वाली वर्णित किया गया है।

४. **बालिक**[५७]—स्त्रियाँ अपने कानों में बालियाँ धारण करती थीं। सम्भवतः ये पुष्प-निर्मित होती थीं।

**(स) कण्ठाभूषण**—स्त्री-पुरुष दोनों ही कण्ठाभरण का प्रयोग करते थे। इसके निर्माण में मुक्ता और स्वर्ण का ही प्रयोग होता था। इससे भारतीय आर्थिक समृद्धि की सूचना मिलती थी और यह भारतीय स्वर्णकारों की शिल्प कुशलता का भी परिचायक था। इस प्रकार के आभूषणों में यष्टि, हार तथा रत्नावली आदि प्रमुख हैं।

१. **यष्टि (मौली)**—इस आभूषण के पाँच प्रकार—१. शीर्षक, २. उपशीर्षक, ३. प्रकाण्ड, ४. अवघाटक और ५. तरल प्रबन्ध महापुराण में वर्णित हैं[५८]।

i. **शीर्षक**—जिसके मध्य में एक स्थूल मोती होता है उसे शीर्षक कहते हैं[५९]।

ii. **उपशीर्षक**—जिसके मध्य में क्रमानुसार बढ़ते हुए आकार के क्रमशः तीन मोती होते हैं वह उपशीर्षक कहलाता है[६०]।

iii. **प्रकाण्ड**—वह प्रकाण्ड कहलाता है जिसके मध्य में क्रमानुसार बढ़ते हुए आकार के क्रमशः पाँच मोती लगे हों[६१]।

iv. **अवघाटक**—जिसके मध्य में एक बड़ा मणि लगा हो और उसके दोनों ओर क्रमानुसार घटते हुए आकार के छोटे-छोटे मोती हों, उसे अवघाटक कहते हैं[६२]।

---

५४. पद्म, ३।३, ७१।६; तुलनीय रघुवंश, १३।४९।

५५. वासुदेवशरण अग्रवाल—वही, पृ० १४७।

५६. पद्म, ७१।१२। ५७. वही, ८।७१। ५८. महा, १६।४७।

५९. महा, १६।५२। ६०. महा, १६।५२।

६१. महा, १६।५३। ६२. महा, १६।५३।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

v. **तरलप्रबन्ध**—जिसमें सर्वत्र एक समान मोती लगे हुए हों, वह तरल प्रबन्ध कहलाता है[६३]।

उपर्युक्त पाँचों प्रकार की यष्टियों के मणिमध्या तथा शुद्धा भेदानुसार दो विभेद और मिलते हैं[६४]।

**(क) मणिमध्या यष्टि**—जिसके मध्य में मणि प्रयुक्त हुई हो। उसे मणिमध्या यष्टि कहते हैं। मणिमध्या यष्टि को सूत्र और एकावली भी कहते हैं। यदि मणि-मध्या यष्टि विभिन्न प्रकार की मणियों से निर्मित की गई हो तो यह रत्नावली कहलाती है। जिस मणिमध्या यष्टि को किसी निश्चित प्रमाण वाले सुवर्ण, मणि-माणिक्य और मोतियों के मध्य अन्तर देकर गूँथा जाता है उसको अपवर्तिका कहते हैं[६५]। अमरकोष में मोतियों की एक ही माला को एकावली की संज्ञा दी गई है[६६]। सफेद मोती को मणिमध्या के रूप में लगाकर एकावली बनाने का उल्लेख मिलता है[६७]।

**(ख) शुद्धा यष्टि**—जिस यष्टि के मध्य में मणि नहीं लगाई जाती है, उसे शुद्धा यष्टि कहते हैं[६८]।

**२. हार**[६९]—महापुराण के अनुसार हार लड़ियों के समूह को कहते हैं[७०]। हार में स्वच्छ रत्न का प्रयोग करते थे और ये कान्तिमान् होते थे। माला भी हार कहलाती है। मुक्ता-निर्मित माला मुक्ताहार कहलाती थी। हार मोती या रत्न से गुंथित किये जाते थे। लड़ियों की संख्या के न्यूनाधिक होने से हार के ग्यारह प्रकार होते थे[७१]।

**१. इन्द्रच्छन्द हार**—जिसमें १००८ लड़ियाँ होती थीं, उसे इन्द्रच्छन्द हार कहते थे। यह हार सर्वोत्कृष्ट होता था। इस हार को इन्द्र, जिनेन्द्र देव एवं चक्रवर्ती सम्राट् ही धारण करते थे[७२]।

---

६३. महा, १६।५४। ६४. महा, १६।४९।
६५. महा, १६।५०–५१। ६६. अमरकोष, २.६, १०६।
६७. वही, २।६।१५५। ६८. महा, १६।४९।
६९. पद्म, ३।२७७, ७१।२, ८५।१०७, ८८।३१, १०३।९४; महा, ३।२७, ३।१५६, १६।५८, ६३।४३४; हरिवंश, ७।८७।
७०. हारो यष्टिकलापः स्यात्।—महा १६।५५।
७१. महा, १६।५५। ७२. महा, १६।५६।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

२. **विजयच्छन्द हार**—जिसमें ५०४ लड़ियाँ होती थीं उसे विजयच्छन्द हार की संज्ञा दी जाती थी। इस हार का प्रयोग अर्धचक्रवर्ती और बलभद्र आदि पुरुषों द्वारा किया जाता था[७३]। सौन्दर्य की दृष्टि से यह महत्त्वपूर्ण हार होता था।

३. **हार**—जिस हार में १०८ लड़ियाँ होती थीं, वह हार कहलाता था[७४]।

४. **देवच्छन्द हार**—वह हार होता था, जिसमें मोतियों की ८१ लड़ियाँ होती थीं[७५]।

५. **अर्द्धहार**—चौसठ लड़ियों के समूह वाले हार को अर्द्धहार की संज्ञा दी गई है[७६]।

६. **रश्मिकलाप हार**—इसमें ५४ लड़ियाँ होती थी एवं इसकी मोतियों से अपूर्व आभा निःसरित होती थी। अतः यह नाम सार्थक प्रतीत होता है[७७]।

७. **गुच्छहार**—बत्तीस लड़ियों के समूह को गुच्छहार कहा गया है[७८]।

८. **नक्षत्रमाला हार**—सत्ताइस लड़ियों वाले मौक्तिक हार को नक्षत्रमाला हार कहते हैं। इस हार के मोती अश्वनी, भरणी आदि नक्षत्रावली की शोभा का उपहास करते थे[७९]। इस हार की आकृति भी नक्षत्रमाला के सदृश होती थी।

९. **अर्द्धगुच्छ हार** मुक्ता की चौबीस लड़ियों का हार अर्द्धगुच्छ-हार कहलाता था[८०]।

१०. **माणव हार**—इस हार में मोती की बीस लड़ियाँ होती थीं।[८१]

११. **अर्द्धमाणव हार**—वह हार अर्द्धमाणव कहलाता था, जिसमें मुक्ता की दस लड़ियाँ होती थीं[८२]। यदि अर्द्धमाणव हार के मध्य में मणि लगा हो तो उसे फलक हार कहते थे। रत्नजटित स्वर्ण के पाँच फलक वाला फलकहार ही मणि-सोपान कहलाता था। यदि फलकहार में मात्र तीन स्वर्णफलक होते थे तो वह सोपान होता था[८३]।

---

७३. महा, १६।५७।
७४. महा, १६।५८, हरिवंश, ७।८९।
७५. महा, १५।५८।
७६. महा, १६।५८।
७७. महा, १५।५९।
७८. महा, १६।५९।
७९. महा, १६।६०।
८०. महा, १६।६१।
८१. विंशत्या माणवाह्वयः।—महा, १६।६१।
८२. भवेन्मौक्तियष्टीनां तदर्द्धेनार्द्धमाणवः।—महा, १६।६१।
८३. महा, १६।६५-६६।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

यदि हार के इन ग्यारह भेदों में प्रत्येक भेद के साथ यष्टि के पाँच प्रकार—शीर्षक, उपशीर्षक, अवघाटक, प्रकाण्ड एवं तरल प्रबन्ध को भी सम्मिलित कर लिया जाय तो इसके ५५ उप-भेद हो जाते हैं। इनके निम्नांकित नाम हैं—

१. शीर्षक इन्द्रच्छन्द, २. शीर्षक विजयच्छन्द, ३. शीर्षक हार, ४. शीर्षक देवच्छन्द, ५. शीर्षक अर्द्धहार, ६. शीर्षक रश्मिकलाप, ७. शीर्षक गुच्छ, ८. शीर्षक नक्षत्रमाला, ९. शीर्षक अर्द्धगुच्छ, १०. शीर्षक माणव, ११. शीर्षक अर्द्धमाणव, १२. उप-शीर्षक इन्द्रच्छन्द, १३. उपशीर्षक विजयच्छन्द, १४. उप-शीर्षक हार, १५. उप-शीर्षक गुच्छ, १६. उप-शीर्षक नक्षत्र माला, १७. उप-शीर्षक देवच्छन्द १८. उप-शीर्षक अर्द्धहार, १९. उप-शीर्षक रश्मिकलाप, २०. उप-शीर्षक अर्द्धगुच्छ, २१. उप-शीर्षक माणव, २२. उप-शीर्षक अर्द्धमाणव, २३. अवघाटक इन्द्रच्छन्द, २४. अवघाटक विजयच्छन्द, २५. अवघाटक हार, २६. अवघाटक देवच्छन्द, २७. अवघाटक अर्द्धहार, २८. अवघाटक रश्मिकलाप, २९. अवघाटक गुच्छ, ३०. अवघाटक नक्षत्रमाला, ३१. अवघाटक अर्द्ध-गुच्छ, ३२. अवघाटक माणव, ३३. अवघाटक अर्द्धमाणव, ३४. प्रकाण्डक इन्द्रच्छन्द, ३५. प्रकाण्डक विजयच्छन्द, ३६. प्रकाण्डक हार, ३७. प्रकाण्डक देवच्छन्द, ३८. प्रकाण्डक अर्द्धहार, ३९. प्रकाण्डक रश्मिकलाप, ४०. प्रकाण्डक गुच्छ, ४१. प्रकाण्डक नक्षत्रमाला, ४२. प्रकाण्डक अर्द्धगुच्छ, ४३. प्रकाण्डक माणवक, ४४. प्रकाण्डक अर्द्धमाणव, ४५. तरल प्रबन्ध इन्द्रच्छन्द, ४६. तरल प्रबन्ध विजयच्छन्द, ४७. तरल प्रबन्ध हार, ४८. तरल प्रबन्ध देवच्छन्द, ४९. तरल प्रबन्ध अर्द्धहार ५०. तरल प्रबन्ध रश्मिकलाप, ५१. तरल प्रबन्ध गुच्छ, ५२. तरल प्रबन्ध नक्षत्रमाला, ५३. तरल प्रबन्ध अर्द्धगुच्छ, ५४. तरल प्रबन्ध माणव, ५५. तरल प्रबन्ध अर्द्धमाणव[८४]।

डॉ० नेमिचन्द्र शास्त्री के अनुसार, १. इन्द्रच्छन्द, २. विजयच्छन्द, ३. देवच्छन्द, ४. रश्मिकलाप, ५. गुच्छ, ६. नक्षत्रमाला, ७. अर्द्धगुच्छ, ८. माणव, ९. अर्द्धमाणव, १० इन्द्रच्छन्द माणव, ११. विजयच्छन्द माणव आदि यष्टि के ग्यारह भेद हैं। इन्हें शीर्षक, उप-शीर्षक, अवघाटक, प्रकाण्डक तथा तरल प्रबन्ध आदि भेदों में विभक्त करने पर इनकी संख्या ५५ होती है[८५]। डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री का मत संगत नहीं प्रतीत होता है, क्योंकि उपर्युक्त ग्यारह कथित भेद यष्टि के नहीं, बल्कि हार के हैं। महापुराण में हार के ग्यारह भेद निम्नलिखित हैं—१. इन्द्रच्छन्द, २. विजयच्छन्द,

८४. महा, १६।६३-६४। ८५. नेमिचन्द्र शास्त्री—आदिपुराण में प्रतिपादित भारत, पृ० २१६।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

३. हार, ४. देवच्छन्द, ५. अर्द्धहार, ६. रश्मिकलाप, ७. गुच्छ, ८. नक्षत्रमाला, ९. अर्द्धगुच्छ, १०. माणव, ११. अर्द्धमाणव[८६]। महापुराण में वर्णित है कि इन्द्रच्छन्द आदि हारों के मध्य में जब मणि लगी होती है तब उनके नामों के साथ माणव शब्द संयुक्त हो जाता है। इस प्रकार इनके नाम इन्द्रच्छन्द माणव, विजयच्छन्द माणव, हारमाणव, देवच्छन्द माणव आदि हो जाते हैं[८७]। उपर्युक्त पुराण के अनुसार ये सभी हार की कोटि में आते हैं। किन्तु नेमिचन्द्र शास्त्री ने इसी इन्द्रच्छन्द माणव और विजयच्छन्द माणव की परिगणना यष्टि के ग्यारह भेदों के अन्तर्गत की है।

**३. कण्ठ के अन्य आभूषण**

गले में धारण करने वाले अन्य आभूषणों के निम्नांकित उल्लेख जैन-पुराणों में द्रष्टव्य हैं—कण्ठमालिका[८८] (स्त्री-पुरुष दोनों धारण करते थे), कण्ठाभरण[८९] (पुरुषों का आभूषण), स्रक्[९०] (फूल, स्वर्ण, मुक्ता एवं रत्न से निर्मित), काञ्चन सूत्र[९१] (सुवर्ण या रत्नयुक्त), ग्रैवेयक[९२], हारलता[९३], हारवल्ली[९४], हारवल्लरी[९५], मणिहार[९६], हाटक[९७], मुक्ताहार[९८], कण्ठिका[९९], कण्ठिकेवास[१००] (लाख की बनी हुई कण्ठी होती थी जिसकी परिगणना निम्न कोटि में होती थी) आदि।

**(द) कराभूषण**—हाथ में धारण करने वाले आभूषणों में अंगद, केयूर, वलय, कटक एवं मुद्रिका आदि प्रमुख हैं। स्त्री-पुरुष दोनों ही इन आभूषणों का प्रयोग करते थे। केवल इनमें यही अन्तर रहता था कि पुरुष वर्ग के आभूषण सादे और स्त्री वर्ग के आभूषणों में घुँघरू आदि लगे होते थे।

**१. अंगद**[१०१]—इसे भुजाओं पर बाँधा जाता था। इसको स्त्री-पुरुष दोनों बाँधते थे। अंगद के समान केयूर का प्रयोग जैन-ग्रन्थों में वर्णित है। अमरकोषकार ने अंगद और केयूर को एक-दूसरे का पर्याय माना है। क्षीरस्वामी ने केयूर और अंगद की व्युत्पत्ति करते हुए लिखा है कि 'के बाहूशीर्षे यौति केयूरम्' अर्थात् जो

---

८६. महा, १६।५५-६१। ८७. महा, १६।६२। ८८. महा, ६।८।
८९. वही, १५।१९३; हरिवंश, ४७।३८। ९०. पद्म, ३।२७७, ८८।३१।
९१. वही, ३३।१८३, महा, २९।१६७। ९२. महा, २९।१६७; हरिवंश, ११।३३।
९३. वही, १५।१९२। ९४. वही, १५।१९३। ९५. वही, १५।१९४।
९६. वही, १४।११। ९७. पद्म, १००।२५। ९८. महा, १५।८१।
९९. वही, ९।१०५। १००. वही, १।६९।
१०१. महा, ५।२५७, ९।४१, १४।१२, १५।१९९, हरिवंश, ११।१४।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

भुजा के ऊपरी छोर को सुशोभित करे उसे केयूर कहते हैं और 'अंगं दयते अंगदम्' अर्थात् जो अंग को निपीड़ित करे वह अंगद होता है[१०२]।

**२. केयूर**[१०३]—स्त्री-पुरुष दोनों ही अपनी भुजाओं पर केयूर (अंगद या केयूर) धारण करते थे[१०४]। केयूर स्वर्ण एवं रजत के बनते थे। जिस पर लोग अपने स्तर के अनुसार मणियाँ भी जड़वाते थे। हेम केयूर का भी वर्णन कई स्थलों पर हुआ है। केयूर में नोक भी होती थी[१०५]। भर्तृहरि ने केयूर का प्रयोग पुरुषों के अलंकार के अन्तर्गत किया है[१०६]।

**३. मुद्रिका**—हाथ की अंगुली में धारण करने का आभूषण मुद्रिका है। इसका प्रयोग स्त्री-पुरुष समान रूप से करते हैं। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में स्वर्ण-जटित, रत्नजटिव, पशु-पक्षी, देवता-मनुष्य एवं नामोत्कीर्ण मुद्रिका का उल्लेख है[१०७]। पद्मपुराण में अंगूठी के लिए उर्मिका शब्द प्रयुक्त हुआ है[१०८]। त्रिषष्टि-शलाका पुरुषचरित में स्त्री के आभूषण के रूप में अंगूठी का वर्णन है[१०९]।

**४. कटक**[११०]—प्राचीन काल से हाथ में स्वर्ण, रजत, हाथी दाँत एवं शंख-निर्मित कटक धारण करने का प्रचलन था। इसका प्रयोग स्त्री-पुरुष दोनों ही करते थे। रत्नजटित चमकीले कड़े के लिए दिव्य कटक शब्द का प्रयोग महापुराण में हुआ है[१११]। हर्षचरित में कटक और केयूर दोनों का वर्णन आया है[११२]। वासुदेवशरण

---

१०२. द्रष्टव्य, गोकुलचन्द्र जैन—यशस्तिलक का सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० १४७।

१०३. महा. ६८।६५२, ३।१५७, ९।४१, १५।१९९, हरिवंश, ७।८९, पद्म ३।२, ३।१९०, ८।४१५, ११।३२८, ८५।१०७, ८८।३१ रघुवंश, ७.५०।

१०४. नरेन्द्र देव सिंह—भारतीय संस्कृति का इतिहास, पृ० ११५।

१०५. रघुवंश, ७।५०। १०६. भर्तृहरिशतक, २.१९।

१०७. हरिवंश, ४९।११, महा, ७।२३५, ४७।२१९, ५९।१६७, ६८।३६७।

१०८. पद्म, ३३।१३१, तुलनीय रघुवंश, ६-१८।

१०९. ए० के० मजूमदार—चालुक्याज ऑफ गुजरात, पृ० ३५९ पर उद्धृत।

११०. पद्म ३।३; हरिवंश, ११।११; महा, ७।२३५, १४।१२, १६।२३६, तुलनीय मालविकाग्निमित्रम्, अंक २, पृ० २८६।

१११. महा, २९।१६७।

११२. वासुदेवशरण अग्रवाल, हर्षचरित : एक सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० १७६।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

अग्रवाल ने कटक-कदम्ब (पैदल सिपाही) की व्याख्या में बताया है कि सम्भवतः कटक (कड़ा) धारण करने के कारण ही उन्हें कटक-कदम्ब कहा जाता था[११३]।

**(य) कटि-आभूषण**—कटि आभूषणों का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। काञ्ची, मेखला, रसना, दाम, कटिसूत्र आदि की गणना कटि आभूषणों में होती है।[११४]

**१. काञ्ची**—जैन पुराणों में कटिवस्त्र से सटाकर धारण किए जाने वाले आभूषण हेतु काञ्ची शब्द का प्रयोग हुआ है। काञ्ची चौड़ी पट्टी की स्वर्ण-निर्मित होती थी। इसमें मणियों, रत्नों एवं घुँघरुओं का भी प्रयोग होता था[११५]।

**२. मेखला**[११६]—यह कटि में धारण किया जाने वाला आभूषण था। स्त्री-पुरुष दोनों मेखला धारण करते थे। इसकी चौड़ाई पतली होती थी। सादी कनक मेखला एवं रत्नजटित मेखला या मणि मेखला होती थी[११७]।

**३. रसना**[११८]—यह भी काञ्ची एवं मेखला की भाँति कमर में धारण करने का आभूषण था। रसना भी चौड़ाई में पतली होती थी। इसमें घुँघरू लगने के कारण ध्वनि होती है। अमरकोष में काञ्ची, मेखला एवं रसना पर्यायवाची अर्थ में प्रयुक्त हुए हैं। इनको स्त्रियाँ कटि में धारण करती थीं[११९]।

**४. दाम**—यह कमर में धारण करने का आभूषण था। दाम कई प्रकार के होते थे। काञ्चीदाम, मुक्तादाम, मेखलादाम एवं किंकिणीयुक्त मणिमयदाम आदि प्रमुख हैं[१२०]।

**५. कटिसूत्र**—इसको स्त्री-पुरुष दोनों कटि में धारण करते थे[१२१]।

---

११३. वही, पृ० १३१। ११४. अमरकोष २।६।१०८।

११५. पद्म, ८।७२, महा, ७।१२९, १२।१९, तुलनीय ऋतुसंहार, ६।७।

११६. पद्म, ७१।६५, महा, १५।२३, तुलनीय रघुवंश, १०.८; कुमारसम्भव, ८.२६।

११७. हरिवंश, २।३५।

११८. महा, १५।२०३, तुलनीय रघुवंश, ८.५८, उत्तरमेघ, ३, ऋतुसंहार, ३.३, कुमारसम्भव ७-६१।

११९. स्त्रीकट्यां मेखला काञ्ची सप्तकी रसना तथा।—अमरकोष २।६।१०८।

१२०. महा, ४।१८४, ८।१३, ११।१२१, १४।१३।

१२१. वही, १३।६९, १६।१९, हरिवंश, ७।८९, ११।१४।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

**(र) पादाभूषण**—नूपुर, तुलाकोटि, गोमुख मणि आदि की गणना प्रमुख पादाभूषणों में होती थी। यह नारियों का आभूषण होता था।

१. **नूपुर**[१२२]—इस आभूषण को स्त्रियाँ पैरों में धारण करती थीं। नूपुर में घुँघरू लगने के कारण मधुर ध्वनि निकलती थी। मणिनूपुर, शिञ्जितनूपुर, भास्वत-कलानूपुर आदि चार प्रकार के नूपुरों का वर्णन मिलता है[१२३]।

२. **तुलाकोटि**[१२४]—तुला अर्थात् तराजू की डण्डी के सदृश आभूषण के दोनों किनारे किञ्चित् घनाकार होने के कारण ही इसका नाम तुलाकोटि पड़ा। इसका उल्लेख बाणभट्ट ने हर्षचरित में किया है[१२५]।

३. **गोमुखमणि**—इस प्रकार के मणियुक्त आभूषण को गोमुखमणि की संज्ञा प्रदान की गई है। इसका आकार गाय के मुख के समान होता था[१२६]।

प्राचीन इतिहास, संस्कृति एवं पुरातत्त्व विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय,
इलाहाबाद, उत्तर-प्रदेश।

१२२. हरिवंश, १४।१४, महा, ६।६३, १६।२३७, पद्म २७।३२, तुलनीय रघुवंश, १३.२३।
१२३. कुमारसम्भव, १.३४, ऋतुसंहार, ४.४, विक्रमोर्वशीयं, ३।१५।
१२४. महा, ९।४१; नेमिचन्द्र, आदिपुराण में प्रतिपादित भारत, पृ० २२२।
१२५. द्रष्टव्य, गोकुलचन्द्र जैन—यशस्तिलक का सांस्कृतिक अध्ययन, पृ० १५१।
१२६. महा, १४।१४।



Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org